ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 129-130

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

सामाजिक परिवर्तन तथा आर्थिक विकास में जाति व्यवस्था (एक समाज–वैज्ञानिक अध्ययन)

अशोक कुमार सिंह

प्राचार्य– एस0 डी0 एन0 एच/एस कम इण्टर कालेज, लहदपुर, सारन (बिहार), भारत

Received- 20.08.2020, Revised- 24.08.2020, Accepted - 27.08.2020 E-mail: - dr.ramanyadav@gmail.com

सारांश : ***परिवर्तन समाज का एक शाश्वत नियम है। समाज एक परिवर्तनशील व्यवस्था है। प्रत्येक समाज में चाहे–अनचाहे परिवर्तन की प्रक्रिया चलती रहती है। सामाजिक परिवर्तन समाज के आन्तरिक एवं बाहरी या संरचनात्मक दोनों पक्षों में हो सकता है। सामाजिक परिवर्तन एक सार्वभौमिक एवं अनिवार्य प्रक्रिया है, लेकिन सामाजिक परिवर्तन की कोई निश्चित भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है। इसका मुख्य कारण यह है कि अनेक आकस्मिक कारक भी सामाजिक परिवर्तन की स्थिति पैदा करते हैं। इसलिए सामाजिक परिवर्तन के निश्चित स्वरूप की भविष्यवाणी हम नहीं कर सकते हैं।***

कुंजीभूत शब्द– शाश्वत, परिवर्तनशील, व्यवस्था, प्रक्रिया, आन्तरिक, संरचनात्मक, सार्वभौमिक, अनिवार्य ।

सामाजिक विकास एक ओर मानव आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के बीच और दूसरी ओर सामाजिक नीतियों और कार्यक्रमों के बीच अच्छा सामंजस्य स्थापित करने के लिए एक नियोजित संख्यात्मक परिवर्तन की प्रक्रिया है। यह समाज में व्यक्तियों के लिए आर्थिक प्रगति को अच्छी जीवन स्थितियों में परिवर्तन परिवर्तित करता है। उद्विकास एवं प्रगति की भांति विकास भी एक सामाजिक प्रक्रिया है। विकास का प्रत्यक्ष सम्बन्ध समाज के आर्थिक पहलू से होता है। सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब समाज का आर्थिक विकास होगा। विकास वह परिवर्तन है जिनके द्वारा उन तत्वों को प्रकाश में लाया जा सकता है जिसकी समाज को आवश्यकता है। वास्तव में सामाजिक विकास की आवश्यकता सामाजिक प्रगति को प्राप्ति के होती है। विकास के विभिन्न प्रकार हैं जैसे– आर्थिक विकास, राजनीतिक विकास, सांस्कृतिक विकास, मानसिक विकास तथा सामाजिक विकास। यहाँ विकास से तात्पर्य सामाजिक परिवर्तन के साथ–साथ आर्थिक वृद्धि से भी है। इस आधार पर विकास को निम्नलिखित सूत्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है :

विकास– परिवर्तन+आर्थिक वृद्धि– आर्थिक विकास एक अनवरत प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में दीर्घकाल में वृद्धि होती है।

जाति व्यवस्था– जाति मुख्यतः जन्म के आधार पर सामाजिक संस्मरण एक खण्ड–विभाजन थी वह गतिशील व्यवस्था है जो खाने–पीने, विवाह, पेशा, और सामाजिक सहवासों के सम्बन्ध में अनेक या कुछ प्रतिबंधों को अपने सदस्यों पर लागू करती है। इस सम्बन्ध में स्मरणीय है कि जाति व्यवस्था गतिशील है और इसके प्रतिबन्ध भी अन्तिम नहीं है, जैसे, धन या प्रतिष्ठा या सत्ता के आधार पर एक व्यक्ति अपनी जाति को भी बदल सकता है और बदलता भी है। यही कारण है कि जाति की कोई अन्तिम परिभाषा प्रस्तुत करना वास्तव में कठिन है। जाति व्यवस्था में आधुनिक परिवर्तन या पाश्चात्य शिक्षा, प्रौद्योगिक उन्नति, पेशों की बहुलता, धन का महत्व, राजनीतिक आन्दोलन, धार्मिक आन्दोलन तथा सरकारी प्रयत्न हैं।

सभी प्रकार के परिवर्तन के बावजूद खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी सामाजिक परिवर्तन तथा आर्थिक विकास में जाति व्यवस्था की प्रमुख भूमिका है। यही कारण है कि एक लोहार का लड़का अपने घरेलु या अनुवासिक पेशों के बल पर लोहा के कार्य में अधिक दक्ष होकर बहुत बड़ा आदमी बन जाता है तथा उसकी आर्थिक स्थिति बेहतर हो जाती है जिससे सामाजिक परिवर्तन भी उसके रहन–सहन स्वभाव भी बदल जाते हैं। पहले जाति व्यवस्था में पेशे निश्चित होते थे, खान–पान का ढंग निश्चित होता था, विभिन्न उत्सवों पर तथा धार्मिक समारोहों में लोगों का व्यवहार निश्चित होता था। अतः इस स्थिति में परिवर्तन की बात उठती ही नहीं थी। सामाजिक परिवर्तन से मतलब सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन से होता है। जाति व्यवस्था की पहल पर दृष्टिपात करने से यह विदित होता है कि परिवर्तन संभव नहीं है। जिस प्रकार समाज में सामाजिक स्तरण जातिगत है उसे इसी कारणवश स्थिर अथवा परम्परागत समाज की संज्ञा दी जाती है लेकिन अब स्थिति में परिवर्तन हुआ है। जाति व्यवस्था में परिवर्तन सामाजिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त कर रही है। कुछ ऐसे कारक हैं जिसके कारण जाति व्यवस्था तथा सामाजिक सम्बन्ध परिवर्तित हो रहे हैं तथा जिसके कारण सामाजिक परिवर्तन

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

के मार्ग प्रशस्त हो रहा है।

पहले जाति व्यवस्था के अन्तर्गत व्यवसाय पूर्व निश्चित होते थे, जन्म से ही व्यवसायों का निर्धारण होता था, योग्यता अथवा रूचि से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था। उच्च जातियों के लोग आवश्यकता होते हुए भी निम्न जातियों के पेशों को नहीं अपनाते थे। आज स्थिति ऐसी नहीं है। आवश्यकतानुसार अब लोगों के पेशों में परिवर्तन हो रहा है जो सामाजिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त कर रहा है। जाति व्यवस्था आज आर्थिक परिवर्तन को तेजकर सामाजिक परिवर्तन को जन्म दे रही है।

आज जाति व्यवस्था स्वयं परिवर्तित होकर सामाजिक परिवर्तन को जन्म दे रही है। यह व्यवस्था अब आर्थिक विकास में भी सहायक हो रही है क्योंकि पेशे से संबंधित जातिगत मान्यताएँ शिथिल पड़ रही है। अब प्रत्येक जाति के सदस्य को यह छूट है कि यह अपनी इच्छा और लाभ को ध्यान में रखकर पेशे का चुनाव करे फिर भी जाति व्यवस्था की अधिकांश विशेषताएँ अभी पूर्ववत बनी हुई है। भारतीय जाति व्यवस्था अब भी स्थिर है। यह लोगों को एक निश्चित परिस्थिति प्रदान करती है। जिससे गरीबी अथवा अमीरी सफलता अथवा असफलता अलग नहीं कर सकती। व्यक्ति का सामान्यतया सभी व्यवहार जाति द्वारा निर्धारित होता है। जाति ही विवाह तथा पेशे के ढंग को निश्चित करती है। नगरों में यद्यपि जाति व्यवस्था कुछ ढीली पड़ रही है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी स्थिति पूर्ववत बनी हुई है। जाति व्यवस्था अब भी अपने प्रभाव को बनाये हुए हैं, केवल परिवर्तन विभिन्न जातियों की मनोवृतियों में हो रहा है जिसके कारण प्रत्येक जाति अपनी–अपनी स्थिति को सुदृढ़ करने में लगी है। अब अपनी जाति तथा उसके सदस्यों के प्रति वफादारी बढ़ रही है। प्रत्येक जाति अब अलग–अलग विभिन्न सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में लगी है। चुनाव भी अब जाति के आधार पर लड़े जा रहे हैं। फिर भी अब समाज स्थिर नहीं कहा जा सकता क्योंकि परिवर्तन की प्रक्रियाएँ सक्रिय है और आर्थिक विकास हो रहा है। इसप्रकार के अध्ययन के लिए बनायी गई उपकल्पना सार्थक प्रमाणित होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Aberle, David, The peyote Religion Among the Navaho, Chicago, Aldine Press, 1966
2. Bailey, F.G., Caste and Economic Frontier Manchester University, Manchester 1957.
3. Beteille, Andre Caste : Old and New, Essays in Social stratification, Asia Publishing House, Delhi 1969.
4. Dube, S.C. Indian Village Routledge and Kegan Paul, London, 1955.
5. Sing Yogendra, "Caste and Class : Some As pects of Continuity and Change. Sociological Bulleting Bombay, Vol. 27, 1968

*****

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*